Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 10 | ISSUE : 1 | JANUARY 2024

राठौड़ सत्ता का आगमन एवं उत्थान: मारवाड़ के विशेष संदर्भ में

डॉ. प्रेम स्वामी [1]

[1] **इतिहास विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान.**

ABSTRACT:

मारवाड़ की वसुन्धरा प्राचीन काल से ही आबाद होने लगी थी। छठी शती ई.पू. में भारत में महाजनपदों का उत्थान एवं बौद्ध एवं जैन धर्म का उदय हुआ। लेकिन इस काल में हमें मरु प्रदेश के सम्बन्ध में जानकारी नहीं मिलती। सिकन्दर के आक्रमण के समय (327 ई.पू.) पंजाब क्षेत्र में रहने वाली अनेक वीर जातियाँ जो छोटे–छोटे कबीलों के रूप में गणतन्त्रात्मक व्यवस्था के रूप में रहती थी, अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए इस विशाल मरुप्रदेश में आ गई। इसमें अर्जुनायन, मालव, शिवि आदि प्रमुख थी। कालान्तर में ये जातियां शताब्दियों तक इस क्षेत्र की आभीर आदि जन–जातियों से संघर्ष करती रही और अपनी सत्ता का विस्तार करती रही। सम्भवतः मौर्यकाल में यह क्षेत्र मौर्य साम्राज्य का अंग रहा हो। क्योंकि चन्द्रगुप्त मौर्य के अंतिम समय में मौर्य साम्राज्य का विस्तार नर्मदा से अफगानिस्तान तक फैल गया था।

KEYWORDS:

राठौड़ सत्ता, मारवाड़ में राठौड़ सत्ता।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
28th January 2024	29th January 2024

प्रस्तावना

'मारवाड़' शब्द 'मरूवार' शब्द का अपभ्रंश है, जिसको प्राचीन काल में 'मरूस्थान' कहते थे। राजस्थान भारतवर्ष के पश्चिमी भाग में एक बड़ा राज्य है, जो प्राचीन काल में किसी विशेष नाम से विख्यात नहीं था वरन् इसमें कई इकाईयाँ सम्मिलित थीं, जिन्हें अलग–अलग नाम से जाना जाता था। जैसे–मत्स्य देश, सपालदक्ष, कुरूदेश, शूरसेन देश, शिवि जनपद, वार्गट (बागड़) देश, वल्लदेश, जांगलदेश, मालव देश आदि। इसी प्रकार जोधपुर 'मरूदेश' के अन्तर्गत था। जोधपुर का दक्षिणी भाग गुर्जरत्रा (गुजरात) नाम से जाना जाता था।[1]

18वीं शताब्दी में, उसके प्रतिहार शासक नागभट्ट प्रथम ने राजस्थान एवम् अन्य क्षेत्रों को अरबों से स्वतंत्र कराया था। प्रतिहारों के पतन के पश्चात् राठौड़ों ने बागडोर संभाली, जो बारहवीं शताब्दी के अन्त में विदेशी आक्रमणकारियों से गंगाघाटी में हारने के पश्चात् मरूस्थल में अपना भाग्य आजमाने के लिए आये।[2] ये राठौड़ सदा से ही प्रतापी और वीर होते चले आये हैं। इसी से ये राजस्थान में 'रणबंका राठौड़' के नाम से प्रसिद्ध हैं। विक्रम संवत् 1300 (ई.सं.1243) के आसपास कन्नौज की तरफ से राठौड़ कुँवर सेतराम का पुत्र सीहा मारवाड़ में आया और उसके वंशजों ने क्रमशः अपना राज्य बढ़ाते हुए सारे मारवाड़ प्रदेश पर अधिकार कर लिया। उन्हीं के वंशज इस समय राजपूताने में जोधपुर, बीकानेर और किशनगढ़ के स्वामी हैं। 'मारवाड़ की ख्यातों' में सीहाजी का वि.सं. 1212 में मारवाड़ में आना लिखा है। कर्नल जेम्स टॉड ने सीहाजी के कन्नौज छोड़ कर मारवाड़ में आने का समय वि.सं. 1268 (ई.स. 1212) लिखा है। जनरल कनिंघम इस महत्वपूर्ण घटना का वि.सं. 1283 (ई.स. 1226) में होना मानते हैं।[3] राव सीहाजी के कन्नौज से आने के पूर्व यहाँ पर अनेक राजवंशों का अधिकार रह चुका था। उनमें थे – मौर्य, शुंग, कुषाण, शक, नाग, गुप्त, हूण, गुर्जर, चावड़ा, प्रतिहार, गुहिल, परमार, सोलंकी व चौहान आदि। मौर्य वंश का प्रतापी राजा व संस्थापक चन्द्रगुप्त मौर्य था। उसने क्रमशः सारा उत्तरी भारत विजयकर अपने अधिकार में ले लिया। इससे राजपूताने के मारवाड़ आदि प्रदेश भी उसके हाथ में आ गये। आगे चलकर कुषाणों का राज्य रहा, जिनका अधिकार क्षेत्र समस्त राजपूताना, सिंध, खेतान, समरकन्द आदि तक फैला हुआ था। कनिष्क इनका सबसे प्रतापी राजा हुआ। कुषाण वंशियों के पीछे शक जाति के पश्चिमी क्षत्रपों का इस प्रदेश पर बहुत समय तक अधिकार रहा। अंतिम क्षत्रप राजा स्वामी रूद्रसिंह को मारकर गुप्त वंश के महाप्रतापी राजा चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) ने यहाँ अपना राज्य स्थापित किया। अतएव मारवाड़ भी उसके अधिकार में चला गया। गुप्तकाल के दो तोरणद्वार मण्डोर के प्राचीन दुर्ग के ध्वंसावशेषों से मिले हैं। गुप्त कालीन सिक्के भी मारवाड़ के विभिन्न स्थानों से मिले हैं। गुप्त वंश के बाद यहाँ हूण वंश का अधिकार रहा। इनके भी कई सिक्के नागौर, पाली, जालौर, बाड़मेर आदि परगनों से मिले हैं। हूणों के बाद यशोवर्मन ने मारवाड़ पर अपना राज्य स्थापित किया। हूणों के पीछे गुर्जर वंश का यहाँ अधिकार होना पाया जाता है जिनकी राजधानी भीनमाल थी। गुर्जरों के अधीन होने के कारण मारवाड़ का भीनमाल से उत्तर का सारा पूर्वी हिस्सा गुर्जरत्रा (गुजरात प्राचीन) कहलाता था। चीनी यात्री हुएनत्सांग ने जो वि.सं. 686 में भारत आया था, भीनमाल को गुजरात की राजधानी लिखा है। गुर्जरों के बाद मारवाड़ में चावड़ों का अधिकार हुआ, जिनकी राजधानी भी भीनमाल ही रही। आगे चलकर कन्नौज के वैस वंशी महाप्रतापी राजा हर्षवर्धन ने चावड़ों को अपने अधीन कर लिया। हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् भीनमाल के रघुवंशी प्रतिहार राजा नागभट्ट (द्वितीय) ने चक्रायुध को परास्त कर वह विशाल राज्य अपने अधीन कर लिया। मेवाड़ के गुहिल वंशियों का राज्य भी मारवाड़ के खेड़, पीपाड़ आदि स्थानों में रघुवंशी प्रतिहारों के राजत्व काल से लगाकर बहुत पीछे तक रहा। अब भी मारवाड़ में गुहिल वंशियों (गोहिलों) के कुछ ठिकाने विद्यमान हैं। मारवाड़ के परमारों की श्रृंखलाबद्ध वंशावली उप्पलराज से मिलती है। इनका मूल स्थान आबू था, जहाँ से ये अलग–अलग हिस्सों में फैले। इन परमारों की मारवाड़ की शाखाओं के शिलालेख जोधपुर राज्य में ओसियाँ, भीनमाल, भाडूंद, जालौर, किराडू, कोयलवाव, नाणा आदि स्थानों से मिले हैं। गुजरात के अंतिम चावड़ा राजा सामंत सिंह को वि.सं. 998 (ई.स. 941) में मारकर उसका भानजा सोलंकी मूलराज गुजरात का स्वामी बना। वहाँ से आगे बढ़कर उसने मारवाड़ के कुछ अंश पर दखल किया। चौहानों की अनेक शाखाओं में से सोनगरे चौहानों की शाखायें मारवाड़ में कई स्थानों पर फैलीं तथा नाडोल, मंडोर, बाहड़मेर, भीनमाल, रतनपुर, सत्यपुर (सांचोर) आदि पर इन्हीं का अधिकार रहा।[4]

इस प्रकार मारवाड़ राज्य पर वि.सं. 1300 तक कई राजवंशों का शासन रहा, लेकिन किसी भी राजवंश का सम्पूर्ण मारवाड़ पर अधिकार स्थाई रूप से नहीं रहा। मारवाड़ में राठौड़ राज्य की स्थापना वि.सं. 1300 के लगभग सर्वप्रथम कन्नौज के शासक जयचन्द्र के वंशज राठौड़ राव सीहा ने की। राव सीहा मारवाड़ के राठौड़ वंश का मूल पुरुष माना जाता है।[5] राठौड़ वंश क्षत्रियों के 36 राजवंशों में से एक प्राचीन राजवंश है। राठौड़ मारवाड़ में कन्नौज से आये थे। इससे पहले इनका राज्य दक्षिण में था। भिन्न–भिन्न ताम्रपत्रों, शिलालेखों, पुस्तकों आदि में राष्ट्रकूट (राठौड़) वंश की उत्पत्ति के विषय में भिन्न–भिन्न मत मिलते हैं। राठौड़ों की वंशावलियाँ रामचन्द्र के दूसरे पुत्र कुश से इसकी उत्पत्ति बतलाती हैं। अतएव ये अपने को सूर्यवंशी मानते हैं। दयालदास भी राठौड़ों को सूर्यवंशी लिखता है। जो 'राटेश्वरी देवी' की आराधना से उत्पन्न 'रठवर' के वंशज होने से राठौड़ कहलाये।[6]

राठौड़ शब्द केवल भाषा में ही प्रचलित है। संस्कृत पुस्तकों, शिलालेखों और दानपत्रों में उसके लिए 'राष्ट्रकूट' शब्द मिलता है। दक्षिण तथा भारत के अन्य भागों में प्राचीन काल में जहाँ–जहाँ भी राठौड़ों का राज्य रहा वहाँ बहुधा 'राष्ट्रकूट' शब्द का ही प्रयोग होता रहा। 'राष्ट्रकूट' शब्द का ही प्राकृत रूप 'राठौड़' शब्द बनता है। 'राष्ट्रकूट' शब्द के अनेक प्राकृत रूपान्तर पाये जाते हैं। जैसे – राठवर, राठवड़, राठउर, राठउड़, राठौड़, रट्ट आदि। कहीं कहीं राष्ट्रवर्य शब्द भी मिलता है, जिससे राठवड़ शब्द बना है। राष्ट्रकूट और राष्ट्रवर्य दोनों

शब्द समानार्थी हैं। ये प्राकृत शब्द दक्षिण की राष्ट्रकूट जाति के बोधक है। मारवाड़ में इसका अपभ्रंश रूप 'राठौड़' शब्द ही प्रचलन में है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से भी 'राठौड़' शब्द राष्ट्रकूट का ही अपभ्रंश है। अनेक स्त्रोतों[7] के अनुसार राव सीहा कन्नौजिया राठौड़ थे और कन्नौज के शासक जयचंद के वंशज थे। अतः उपुर्यक्त तर्कों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि राव सीहा कन्नौज से आये थे तथा राष्ट्रकूट नरेश जयचंद्र उनका पूर्वज था। बीढू गाँव (जिला पाली) में प्राप्त राव सीहा की देवली पर एक छोटे से अभिलेख से ज्ञात होता है कि उनका निधन वि.सं. 1330 कार्तिक वदि 12 (9 अक्टूबर, 1273 ई.) को हुआ था।

राठौड़ सत्ता का आगमन एवं उत्थान

राव सीहा : गंगा के हरे भरे मैदानों से बहुत दूर मरुभूमि में राठौड़ राज्य का बीजारोपण करने वाला सीहा राठौड़ राजवंश का अग्रज पुरुष था। वह एक महान साहसी योद्धा था। उसने गोहिलों को पराजित करके लूनी नदी के किनारे प्राचीन खेड़नाथ की लीलाभूमि में राठौड़ कुल की विजय पताका गाड़ी। जेम्स टॉड के अनुसार – कन्नौज का राज्य चले जाने के 18 वर्ष बाद वि.सं. 1268 में वहां के अन्तिम राजा जयचन्द्र के पोते व सेतराम के पुत्र सीहा, अपनी जन्मभूमि का परित्याग कर 200 साथियों के साथ पश्चिमी रेगिस्तान की ओर, ख्यातों के अनुसार द्वारिका की यात्रा करने के लिए, परन्तु वास्तव में किसी नये ठिकाने की तलाश में रवाना हुए। इतिहास से ज्ञात होता है कि जिस समय सीहा जी द्वारिका की यात्रा को जा रहे थे, तब मार्ग में पुष्कर में ठहरे। तब वहीं पर इनकी भेंट तीर्थ–यात्रार्थ आए हुए भीनमाल के ब्राह्मणों से हुई। जिन्होंने मुलतान के मुसलमानों के आक्रमणों से उनकी रक्षार्थ प्रार्थना की। जिसे सीहा जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। भीनमाल में ब्राह्मणों का कष्ट दूर कर सीहा जी ने द्वारिका (गुजरात) की यात्रा की और वहाँ से लौटते हुए कुछ दिन पाटन में ठहरे। ख्यातों में लिखा है कि जब सीहा जी पाटन से लौटकर पाली (मारवाड़) पहुँचे, तब वहाँ के पल्लीवाल ब्राह्मणों की, आसपास की, लुटेरी जातियों से रक्षा करने हेतु पाली को अपना निवास स्थान बनाया तथा अवसर पाकर सीहाजी ने आसपास के प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया। वस्तुतः यहीं से मारवाड़ राज्य का बीजारोपण होता है। इन्हीं ब्राह्मणों की रक्षार्थ सम्भवतया मेरो अथवा सिन्ध के लुटेरे मुसलमानों के साथ हुए युद्ध में ही राव सीहा की सोमवार 9 अक्टूबर सन् 1273 ई. को (वि.सं. 1330 की कार्तिक बदी 12) मृत्यु हुई, जैसा कि उसके देवली के लेख से प्रकट है। राव सीहा की सोलंकी राणी पार्वती देवी से तीन पुत्र हुए – आसथान, सोनंग और अज।[8]

राव सीहा के बाद उसके ज्येष्ठ पुत्र आसथान ने 84 गाँवों के साथ पाली को अपने अधिकार में कर लिया। आगे गोहिलों से खेड़ का राज्य लेकर आसथान (1273–1292) ने वहाँ अपनी राजधानी स्थापित की (जोधपुर राज्य की ख्यात से)। इसके बाद इसका पुत्र धूहड़ (1292–1309 ई.) गद्दी पर बैठा। उसने अपने जीवन काल में कर्णाटक से चक्रेश्वरी देवी की मूर्ति को लाकर नागाणा गाँव में स्थापित की जो बाद में नागणेची के नाम से प्रसिद्ध हुई। राव सीहा से वीरम के बीच 1212 से 1383 ई. तक का समय मारवाड़ राज्य के जन्म और उथल–पुथल की अनेक घटनाओं का संघर्ष पूर्ण समय रहा। 1383 ई. में वीरम के देहान्त के बाद राव चूँड़ा उसका उत्तराधिकारी हुआ। राव चूँड़ा के राज्यारोहण से राज्य में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। पड़िहारों ने नवोदित चूँड़ा के साथ अपनी लड़की का विवाह कर मंडोर उसको दे दिया। इस प्रकार राठौड़ राव वीरम का पुत्र चूँड़ा, जो मारवाड़ के प्रचलित राठौड़ वंश के राजाओं के पूर्वजों में, मंडोर का सर्वप्रथम स्वामी बना। उसने मण्डोर के दुर्ग पर अधिकार कर उसे अपनी राजधानी बनाया और नागौर, डीडवाना, सांभर, अजमेर, जांगल प्रदेश (आधुनिक बीकानेर) तथा फलौदी पर अधिकार कर राज्य को विस्तृत और स्थायी बनाने की चेष्ट की। टॉड के अनुसार – राव चूड़ा का राठोड़ों के इतिहास में प्रमुख स्थान है। उसने समस्त राठोड़ों का संगठन किया।[9] मण्डोर पर चूड़ा का अधिकार होने के साथ ही वहाँ राठौड़ राज्य का श्रीगणेश हो गया, और एक क्षेत्रीय राजनैतिक इकाई के रूप में मारवाड़ राज्य का उद्भव और विकास प्रारम्भ हुआ। राव चूड़ा का उत्तराधिकारी उसका छोटा पुत्र राव कान्हा हुआ और उसकी मृत्यु के पश्चात् उसका भाई राव सवा गद्दी पर बैठा। तत्पश्चात् राव रणमल गद्दी पर बैठा। इन्हीं का पुत्र राव जोधा इनकी मृत्यु के पश्चात् इनका उत्तराधिकारी हुआ। राव रणमल मारवाड़ के इतिहास में बड़े प्रसिद्ध राजा हुए हैं। उन्होंने बड़ी ईमानदारी से आफत के समय मेवाड़ का शासन चलाया, लेकिन महाराणा कुम्भा ने लोगों के बहकाने से उसे मरवा दिया।

राव जोधा : राव रणमलजी के द्वितीय पुत्र राव जोधाजी गये हुए मंडोवर के राज्य को अपने पुरुषार्थ से वापिस ले, उसके शासक बने। अपने पिता के चित्तौड़ पर मारे जाने के बाद जब जोधा जी भाग कर मारवाड़ की तरफ आये, तब कई वर्षों तक मरुस्थल में घूमते रहे। अन्त में लगातार परिश्रम के बाद वि.सं. 1510 में जोधा ने मंडोवर पर कब्जा कर लिया। परन्तु मेवाड़ की फौज ने भी वापस चढ़ाई की। पाली के पास घमासान युद्ध हुआ। अन्त में विसं. 1512 (ई. सन् 1455) में दोनों के बीच 'आंवल बांवल की सरहद' तय होकर सन्धि हुई। इसके पश्चात् राज्य की सुरक्षा की दृष्टि से मंडोर के किले को नाकाफी देख वि.सं. 1515 (चैत्रादि 1516) ज्येष्ठ सुदि 11 (ई.सं. 1459 ता. 12 मई) शनिवार को राव जोधा ने चिड़ियानाथ की टूंक नामक पहाड़ी पर एक नये व सुदृढ़ गढ़ की नींव रखी। गढ़ के नीचे अपने नाम पर जोधा ने नया नगर जोधपुर बसाया और मंडोवर के स्थान पर इसे ही अपनी राजधानी बनाया। राव जोधा के पुत्र राव बीका ने संवत् 1545 (1488 ई.) में बीकानेर राज्य की नींव डाली। राव जोधा के पुत्र दूदा की पौत्री भक्त शिरोमणि कवियित्री मीरा बाई थी जिसका विवाह मेवाड़ के राणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज के साथ हुआ था। राव जोधा जोधपुर का प्रथम प्रतापी शासक था। उसके काल में ही सामन्तवादी व्यवस्था का विकास हुआ। राव जोधा ने राठोड़ राज्य की पुनर्स्थापना ही नहीं की अपितु मंडोर, मेड़ता, सोजत, जैतारण और जांगलू पर अधिकार कर अपने राज्य क्षेत्र का बहुत विस्तार किया और मारवाड़ राज्य को स्थायित्व दिया। लगभग 35 वर्षों तक वे अपने राज्य की उन्नति में लगे रहे। वे सैन्य विज्ञान के योद्धा, साहसी, वीर, दानी और बुद्धिमान नरेश थे। उस समय इनके अधिकार में मंडोर, जोधपुर, मेड़ता, फलौदी, पोकरण, महेवा, भाद्रा–जन, सोजत, गोड़वाड़ का कुछ भाग, जैतारण, शिव, सिवाना, सांभर, अजमेर और नागौर प्रान्त का बहुत सा भाग था। बीकानेर और छापर–द्रोणपुर इनके पुत्रों के अधिकार में थे। अतः पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर में हिसार एवम् दक्षिण में अर्वली तक के विस्तृत भू–भाग पर अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार किया।[10] वि.सं. 1545 (चैत्रादि 1546) वैशाख सुदि 5 (ई.सं. 1489 ता. 6 अप्रेल) को जोधपुर में ही राव जोधा का स्वर्गवास हुआ। राव जोधा की मृत्यु होने पर उसके 17 पुत्रों में उत्तराधिकार को लेकर संघर्ष हुआ। सरदारों की सहमति से राव जोधा के बाद क्रमशः राव सातल (1489–92 ई.) सूजा (1492–1515 ई.) और गांगा (1515–1532 ई.) गद्दी पर बैठे।

राव मालदेव : अपने पिता को मारकर वि.सं. 1588 (चैत्रादि 1589) आषाढ़ वदि 2 (ई.सं. 1532 ता. 21 मई) को राव मालदेव जोधपुर के राज्य सिंहासन पर बैठा। राव मालदेव जब गद्दी पर बैठा तब उसके सीधे अधिकार में केवल जोधपुर और सोजत ही थे। मालदेव राज्य विस्तार की नीति में विश्वास करता था। अतः उसने अजमेर, सांचोर, सीवाणा, डीडवाना, जालोर, फलोदी, पोकरण, जहाजपुर, बदनोर, भाद्रा–जण और बीकानेर आदि पर अधिकार कर लिया। धीरे–धीरे उसने मेड़ता, नागौर, सिवाणा, आदि स्थानों पर भी अधिकार कर उस समय का अत्यन्त शक्तिशाली राजा बन गया। उस समय दिल्ली की राजनीति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। शेरशाह सूरी मुगल सम्राट हुमायुँ पर विजय प्राप्त कर दिल्ली के सिंहासन (ई.सं. 1542 ता. 24 जनवरी) पर बैठा। इधर हुमायुँ ने मालदेव की सहायता से लाभ उठाने का विचार कर मारवाड़ की तरफ प्रस्थान किया। इसी बीच शेरशाह ने एक दूत भेजकर मालदेव से हुमायुँ को पकड़कर उसके पास भेजने के लिए कहा। लेकिन मालदेव अब न हुमायुँ से बैर रखना चाहता था और न ही शेरशाह से दुश्मनी। अतएव मालदेव की तरफ से कोई भी मदद न पाकर हुमायुँ ने तुरन्त अमरकोट की तरफ प्रस्थान किया। परन्तु शेरशाह ने कुटिलतापूर्ण तरीके से मालदेव पर हमला कर जोधपुर पर अधिकार कर लिया व एक वर्ष तक जोधपुर उसी के कब्जे में रहा। अगले ही वर्ष कालिंजर के हमले में शेरशाह की, किले में, बारूद से जलकर मरने की खबर पाकर मालदेव ने ई.सं. 1545 में जोधपुर पर पुनः कब्जा कर लिया। मालदेव भारत के शक्तिशाली राजाओं में से एक था। उसने पुराने दुर्गों आदि की मरम्मत और विस्तार कराने के साथ ही कई नये दुर्ग भी बनवाये। विसं. 1619 कार्तिक सुदि 12 (ई.सं. 1562 ता. 07 नवम्बर) को जोधपुर में राव मालदेव का स्वर्गवास हो गया।[11]

राव चन्द्रसेन : मालदेव का उत्तराधिकारी राव चन्द्रसेन हुआ। 'वीर–विनोद' में लिखा है – ''मालदेव की झाली राणी (स्वरूप दे) ने किसी नाराजगी के कारण उदयसिंह को निकलवाकर चन्द्रसेन को युवराज बनवाया।''[12] अतः राव मालदेव के देहान्त के बाद उन्हीं की इच्छानुसार वि.सं. 1619 की मंगसिर वदि (ई.सं. 1562 की 11 नवम्बर) को उनके छठे पुत्र राव चन्द्रसेनजी जोधपुर की गद्दी पर बैठे। परन्तु राव चन्द्रसेन के दोनों भाइयों के विद्रोह करने व अकबर के हस्तक्षेप करने पर भी चन्द्रसेन ने हथियार नहीं डाले, बल्कि वह ई.सं. 1565 ता. 2 दिसम्बर को गढ़ का परित्याग कर भाद्रा की पहाड़ियों में चला गया और किले पर मुगल सेना का अधिकार हो गया। चन्द्रसेन व मुगलों का सदैव बैर चलता रहा लेकिन राव ने उनकी अधीनता नहीं स्वीकार की व पहाड़ों आदि में भटकता रहा और शाही सेनाओं को परेशान करता रहा। यद्यपि चन्द्रसेन ने जोधपुर लेने के लिये बहुत संघर्ष किया परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। राज्य लेने की लालसा में ही वि.सं. 1637 (11 जनवरी 1581 ई.) में सिंचियाई के पहाड़ों में रहते हुए ही उनका देहान्त हो गया। चन्द्रसेन के पश्चात दो वर्ष तक जोधपुर में राजनीतिक अशान्ति रही।

राजा उदयसिंह : राव चन्द्रसेन की मृत्यु के बाद तीन वर्ष तक जोधपुर का राज्य खालसे में रखने के अनन्तर बादशाह ने वहाँ का अधिकार चन्द्रसेन के बड़े भाई उदयसिंह को 'राजा' के खिताब सहित दे दिया और वि.सं. 1640 भाद्रपद वदि 12 (ई.सं. 1583 ता. 4 अगस्त) को वह जोधपुर पर सिंहासनारूढ़ हुआ। राव मालदेव जी के पाँचवे पुत्र राजा उदयसिंह जी ने ही मारवाड़ के नरेशों में पहले पहल बादशाही 'मनसब' अंगीकार किया था। इस प्रकार उदयसिंह ने मुगलों के साथ सहयोग की नीति अपनाई। उदयसिंह के बाद के मारवाड़ के सभी शासक क्रमशः मुगल मनसबदार बनते रहे और इस प्रकार वे मुगलों के निकट सम्पर्क में आये। उदयसिंह 'मोटा राजा' के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। जोधपुर राज्य की ख्यात में लिखा है – ''वि.सं. 1644 (ई.सं.1587) में उदयसिंह की पुत्री मानी बाई का विवाह शाहजादे

सलीम के साथ हुआ। जोधपुर की होने के कारण वह 'जोध बाई' के नाम से भी प्रसिद्ध हुई। उदयसिंह एवम् उसके उत्तराधिकारियों ने शाही सिंहासन की बहुत सेवा की।[13]

उदयसिंह के बाद राजा सूरसिंह वि.सं. 1652 श्रावण वदि 12 (ई.स. 1595 ता. 23 जुलाई) जोधपुर की गद्दी पर बैठे। जोधपुर राज्य की ख्यात से पाया जाता है कि सूरसिंह की दान–पुण्य की ओर विशेष रूचि थी और वह ब्राह्मणों, चारणों आदि का बड़ा सम्मान करता था। जोधपुर के नरेशों में सूरसिंह का नाम बड़ा महत्व रखता है। उसके समय में जोधपुर की विशेष उन्नति हुई। उसके सुप्रबन्ध के कारण राज्य के अन्तर्गत प्रजा में शांति और समृद्धि रही। सूरसिंह के बाद राजा गजसिंह गद्दी पर बैठा। बादशाह ने, सूरसिंह की मृत्यु का समाचार पाकर आगरे से गजसिंह के लिए सिरोपाव आदि भेजे।[14] राजा गजसिंह ने, अपने जीवन काल में ही अपने छोटे पुत्र जसवन्त सिंह को उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। वि.सं. 1694 में ये जसवन्त सिंह के साथ आगरे गये जहाँ वे बीमार हो वि.सं. 1695 की जेठ सुदि 3 (ई. सन् 1638 की 27 मई) को इस संसार से चल बसे।

महाराजा जसवन्त सिंह (प्रथम) 1638–1678 : राजा गजसिंह जी के पश्चात् उनकी इच्छानुसार उनके कनिष्ठ पुत्र जसवन्तसिंह मारवाड़ के राज सिंहासन पर बैठे। इनका राजतिलक वि.सं. 1695 की आषाढ़ वदि 7 (ई. सन् 1638 की 25 मई) को हुआ। बादशाह शाहजहाँ की इन पर बड़ी कृपा थी। बादशाह ने उन्हें 'महाराजा' की उपाधि दी, जो उस समय तक और किसी नरेश को नहीं मिली थी। महाराजा जसवन्तसिंह अपने समय का बड़ा वीर, साहसी, शक्तिशाली, नीतिज्ञ, उदार एवम् न्याय प्रिय नरेश था। उनके राज्यकाल में जोधपुर के राज्य का प्रताप बहुत बढ़ा। ''मआसिर–उल–उमरा'' के अनुसार – ''जसवन्तसिंह अपनी सम्पत्ति और अनुयायिओं की संख्या के कारण भारत के राजाओं में शिरोमणि थे।

जसवन्तसिंह की अधीनता में मारवाड़ राज्य का विस्तार सबसे अधिक हुआ। इतना बड़ा राज्य और किसी हिन्दू राजा का नहीं था। उसके काल में जोधपुर भारत का एक महत्वपूर्ण राज्य हो गया था। ख्यातों से ज्ञात होता है कि – जसवन्तसिंह एक योग्य सेनापति और कुशल व्यवस्थापक थे। महाराजा विद्या और कला के भी प्रेमी थे। वे स्वयं अच्छे कवि थे। जोधपुर की ख्यातों का प्रसिद्ध लेखक मुँहणोत नैणसी उनका ही मंत्री था। बादशाह औरंगजेब के समय में महाराजा अहमदाबाद, बुरहानपुर, औरंगाबाद और काबुल के सूबेदार रहे। अपने युवा पुत्र जगतसिंह की मृत्यु (जिसे औरंगजेब ने मरवा दिया था) के पश्चात् जसवन्त सिंह की मनोदशा दिन प्रतिदिन गिरती गई। फलतः केवल 52 वर्ष की अवस्था में ही 28 नवम्बर सन् 1678 ई. को जमरूद में उसकी मृत्यु हो गई। एक स्थान पर टॉड ने लिखा है कि– बादशाह ने जसवन्त सिंह को विष देकर मरवाया था। महाराजा की मृत्यु के साथ ही जोधपुर राज्य का सितारा अस्त हो गया। बादशाह ने जोधपुर राज्य को खालसा कर ताहिर खाँ को जोधपुर का फ़ौजदार, खिदमत गुज़ार खाँ को क़िलेदार, शेर अनवर को अमीन और अब्दुर्रहीम को कोतवाल बनाकर वहाँ का प्रबन्ध करने के लिए भेजा।[15]

महाराजा अजीत सिंह : वस्तुतः वीर राठौड़ दुर्गादास और उसके सहयोगी योद्धाओं ने ही जसवंत सिंह के मरणोपरान्त उत्पन्न पुत्र अजीतसिंह को उसका पैतृक राज्य जोधपुर दिलाने के लिए लम्बे समय तक संघर्ष किया और अन्त में उन्हें सफलता मिली। राजस्थान के प्रख्यात् इतिहासविद् रघुवीर सिंह जी लिखते हैं – जसवन्तसिंह की मृत्यु के बाद मारवाड़ राज्य पर अपना एकाधिपत्य स्थापित कर, अपनी हिन्दू दमन नीति को सब तरह परिपूर्ण करने हेतु, औरंगज़ेब ने मुगल साम्राज्य के अधीन सारे हिन्दुओं पर पुनः जजिया कर लगा दिया जो जसवन्तसिंह के समय हटा दिया गया था।[16] इस समय जसवन्तसिंह के मरणोपरान्त उत्पन्न पुत्र अजीतसिंह ने एक नई स्थिति पैदा कर दी थी। वस्तुतः यहीं से राठौड़ मुगल संघर्ष शुरू हुआ जो औरंगजेब के शेष जीवन काल (लगभग 30 वर्ष) तक चलता ही रहा। यह संघर्ष (राठौड़–सत्ता व मारवाड़ की स्वतंत्रता के लिए लड़ा गया एक अद्भुत संघर्ष था।

महाराजा मानसिंह जीवन के अंतिम दिनों में जोधपुर छोड़ मंडोर में जा कर रहे थे, जहाँ उनका भादो सुदि 11 वि.सं. 1900 (4 सितम्बर 1843 ई.) को स्वर्गवास हुआ। महाराजा मानसिंह की अंतिम इच्छानुसार व अंग्रेज सरकार की स्वीकृति से महाराजा अजीतसिंह जी के 8वें पुत्र महाराजा आनन्द सिंह के पोते व अहमदनगर के महाराजा तख्तसिंह जोधपुर के राजसिंहासन पर मिंगसर सुदि 10 (1 दिसम्बर) वि.सं. 1900 (ई. सन् 1843) को बैठे। इन्होंने राज्य की बागडोर हाथ में लेते ही सब प्रकार के भीतरी बखेड़ों का अन्त किया। मारवाड़ की सरहद पर एरनपुरा में गदर के बाद वाईसराय लार्ड केनिंग ने महाराजा की इस अमूल्य सहायता के उपलक्ष्य में उन्हें जी.सी.एस.आई. की उपाधि से विभूषित किया। महाराजा के राज्यकाल में वि.सं. 1927 (ई.सन् 1870) में अंग्रेज सरकार ने, जोधपुर दरबार को सवा लाख रूपये और 7000 मन नमक वार्षिक देने का वायदा कर, जोधपुर राज्य के सांभर का भाग नमक के लिए ठेके पर ले लिया।[17] वि.सं. 1929 की माघ सुदि 15 को राजयक्ष्मा (तपेदिक) के रोग से महाराजा तख्तसिंह जी का स्वर्गवास हो गया। महाराजा तख्तसिंह में प्राचीन काल के राजपूतों की सी सरलता, शूरवीरता, निर्भीकता, धीरता और गंभीरता थी। महाराजा कवि और विद्वानों का सम्मान किया करते थे। मारवाड़ में सबसे पहले अंग्रेजी स्कूल व छापाखाना, इन्हीं के राज्य काल में खुले थे।

महाराजा तख्तसिंह जी के ज्येष्ठ पुत्र महाराजा जसवन्त सिंह (द्वितीय) अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् वि.सं. 1929 की फाल्गुन सुदि 3 (ई. 1873 की 1 मार्च) को राजगद्दी पर बैठे। राज्य की सत्ता सम्हालने के साथ ही, इन्होंने वि.सं. 1930 में महकमा खास, दीवानी, फौज़दारी और अपील की अदालतें राजधानी में स्थापित कीं। इन्होंने पहले पहल लिखित कानून आदि का प्रचार कर मारवाड़ के राज्य प्रबन्ध में बड़ी उन्नति की। महाराजा जसवन्त सिंह (द्वितीय) एक सुयोग्य राजा थे। उन्हें कला–कौशल, कविता और व्यायाम का भी शौक था। पहलवानों का एक दल भी राज्य से वेतन पाता था। महाराजा सरदार सिंह, महाराजा जसवन्त सिंह की मृत्यु के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी के रूप में वि.सं. 1952 की कार्तिक सुदि 7 (ई. सन् 1895 की 24 अक्टूबर) को जोधपुर की गद्दी पर विराजे। राज्य प्राप्ति के समय मात्र 16 वर्ष की आयु थी। महाराजा बड़े ही सहृदय, सरल स्वभाव, मधुर भाषी और उदार विचार के थे। धर्म पर इनकी दृढ़ श्रद्धा थी। इनके समय में सरदार समन्द (धोलेलाव ई. सन् 1899) व एडवर्ड–समन्द–बांकली (ई. सन् 1911) में बाँध बने। साथ ही जोधपुर नगर की सड़कें पत्थर की पक्की बनवाई गई। रात में रोशनी का प्रबन्ध किया गया। इसके पश्चात महाराजा सरदारसिंह के ज्येष्ठ पुत्र महाराजा सुमेरसिंह मात्र 13 वर्ष की अल्पायु में ही चैत्र सुदि 7 वि.सं. 1968 (ई. सन् 1911 की 5 अप्रैल) बुधवार को जोधपुर की राजगद्दी पर बैठे। इस समय भारत सरकार ने रीजेन्सी कौंसिल स्थापित कर महाराजा सर प्रतापसिंह को जोधपुर राज्य का अभिभावक (रिजेन्ट) नियुक्त किया। महाराजा के राज्यकाल में 15 जनवरी 1917 को जोधपुर नगर में बिजलीघर की स्थापना, अक्टूबर 1915 में सार्वजनिक पुस्तकालय (सुमेर पब्लिक लाईब्रेरी) का खुलना, चीफ कोर्ट का खोला जाना, व 'मारवाड़ पीनल कोड', 'कोड ऑफ क्रिमिनल प्रोसीजर' आदि कानून की पुस्तकों का प्रकाशित होना, तथा टेलिफोन की सुविधा उपलब्ध होना आदि महत्वपूर्ण कार्य किये गये। इन्होंने सिरोही राज्य की सीमा पर ऊँदरी नामक गाँव के स्थान पर, अपने नाम से 15 मार्च ई. सन् 1912 को 'सुमेरपुर' बसाया।

महाराजा सरदारसिंह के द्वितीय पुत्र उम्मेदसिंह अपने ज्येष्ठ भ्राता सुमेरसिंह के पुत्रहीन स्वर्गवासी हो जाने के कारण, सन् 1918 की 3 अक्टूबर को जोधपुर की राजगद्दी पर बैठे। महाराजा के अव्यस्क होने के कारण रीजेन्सी कौंसिल तथा महत्वपूर्ण मामलों में राय देने के लिए एक सलाहकार समिति बनाई गई। सन् 1922 की 4 सितम्बर को महाराज प्रतापसिंह (अध्यक्ष रीजेन्सी कौंसिल) का अचानक स्वर्गवास हो गया। महाराज के वयस्क होने पर 27 जनवरी 1923 को महाराजा को पूर्ण राज्याधिकार वायसराय लार्ड रीडिंग ने स्वयं जोधपुर आकर दिये।[18] महाराजा नवीन भवन निर्माण के भी शौकीन थे। उन्होंने नगर के दक्षिण पूर्व में छीतर की पहाड़ी पर, 18 नवम्बर 1929 को एक नवीन राजमहल की नींव रखीं। ईस्वी सन् 1933 की 10 मई से मारवाड़ राज्य का नाम 'जोधपुर राज्य' कर दिया गया तथा कौन्सिल के मेम्बर अब 'कौंसिल के मिनिस्टर (मंत्री)' कहलाने लगे। इस प्रकार महाराजा उम्मेदसिंह का राज्यकाल बहुत ही शांतिमय, समृद्धकारी व विकासशील रहा।

महाराजा उम्मेदसिंह के ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते 21 जून 1947 को महाराजा हनवंतसिंह का राजतिलक किया गया। इन्होंने जुलाई 1947 के आरम्भ में ही वायसराय को मारवाड़ राज्य के भारत में विलय करने की इच्छा प्रकट कर दी थी। अतः महाराजा ने 9 अगस्त को भारत में मिलने के अधिमिलन पत्र पर हस्ताक्षर किये। भारत में विलय के साथ ही देशी–रियासतों की स्वतंत्र सत्ता स्वतः ही समाप्त हो गई। इस दृष्टि से ये मारवाड़ के अंतिम शासक थे।

इस प्रकार मारवाड़ का इतिहास काफी प्राचीन है। मारवाड़ पहले अन्य राज्यों के आधिपत्य में था परन्तु बाद में इसका स्वतंत्र अस्तित्व हुआ जहाँ गुर्जर–प्रतिहार और राठौड़ वंशों का शासन स्थापित रहा।

REFERENCES

1. शर्मा, गोपीनाथ, राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2003, पृ.सं. 16

2. माथुर, सौभाग, मारवाड़ में उत्तरदायी शासन के लिए संघर्ष, अंशु पब्लिकेशन, जयपुर, 1990, पृ.सं. 1

3. कनिंघम, जनरल, ऑर्कियोलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट, भाग द्वितीय, 1902–3, पृ. 123

4. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द, जोधपुर राज्य का इतिहास, प्रथम खण्ड, वैदिक मन्त्रालय, अजमेर, 1938, पृ.सं. 76–80

5. सिंह, राठौड़, गोविन्द, मारवाड़ की सांस्कृतिक धरोहर, जोधपुर, 1990, पृ.सं. 7

6. सिंढायच दयालदास की ख्यात जिल्द–1, पृ.सं. 2–3

7. सोलंकी, रामसिंह एवं भाटी, हुकम सिंह, राष्ट्रवीर दुर्गादास राठौड़, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर, 1999, पृ.सं. 12

8. गहलोत, जगदीश सिंह, मारवाड़ राज्य का इतिहास, प्र. महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, दुर्ग, जोधपुर, 1991, पृ.सं. 70–71

9. टॉड, कर्नल जेम्स, राजस्थान का इतिहास, जिल्द 2, जयपुर, 1987, पृ.सं. 944

10. रेउ, विश्वेश्वर नाथ, मारवाड़ का इतिहास, प्रथम खण्ड, जोधपुर 1938, पृ.सं.102–103

11. सिंह, रघुवीर एवं राणावत, मनोहर सिंह, जोधपुर राज्य की ख्यात, जिल्द 1, जोधपुर, 1988 पृ.सं. 68

12. श्यामलदास, कविराजा कृत, 'वीर–विनोद', भाग 2, जोधपुर, 1886, पृ. 813

13. माथुर, सौभाग एवं अनु. माथुर सांवतमल, मारवाड़ में उत्तरदायी शासन के लिए संघर्ष, अंशु पब्लिकेशन, जयपुर, 1990, पृ.सं. 2

14. सिंह, रघुवीर एवं राणावत, मनोहर सिंह, जोधपुर राज्य की ख्यात, जिल्द–1, जोधपुर, 1988 पृ.सं. 150

15. ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द, जोधपुर राज्य का इतिहास, द्वितीय खण्ड, प्र. वैदिक मन्त्रालय, अजमेर, 1941, पृ.सं. 477–478

16. सिंह, रघुवीर, पूर्व–आधुनिक राजस्थान, जोधपुर, 1986, पृ.सं. 81

17. गहलोत, जगदीश सिंह, मारवाड़ राज्य का इतिहास, प्र. महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, दुर्ग, जोधपुर, 1991, पृ.सं. 167

18. मारवाड़ एडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट (1923–24) अध्याय 1, पृ. 3